चिन्तन बैठक मे लोक संसद–आचार्य पंकज

स्थान–महाराजा अग्रसेन भवन, नोएडा उत्तर प्रदेश

दिनांक– 30–31 अगस्त 2013 ई ।

प्रख्यात समाजशास्त्री राजनीतिक विश्लेषक प्रसिद्ध ज्ञान तत्व पाक्षिक हिन्दी पत्रिका के संपादक श्री बजरंग मुनि जी अम्बिकापुर छत्तीसगढ के आहवान पर देश भर से आय सत्रह प्रान्तो के प्रतिनिधियों ने अग्रसेन भवन नोएडा उत्तर प्रदेश मे 30–31 अगस्त 2013 ई0 को भाग लिया। आशा से अधिक प्रतिनिधियों की उपस्थिति से आयोजन समिति का दायित्व भी बढा और प्रसन्नता हुई।

30 अगस्त को परम्परागत संयुक्त परिवार के लगातार हो रहे क्षरण पर गंभीर चर्चा हुई। चर्चा मे मंच पर विख्यात राम कथा वाचक श्री विजय कौशल जी मौखिक विचारक श्री बजरंग मुनि तथा आर्य समाज के वैदिक कथा वाचक श्री राज सिंह आर्य जी विराजमान थे। मंच के समक्ष देश भर से आये प्रतिनिधियों ने भी चर्चा मे भागीदारी की। यह एक प्रकार स उदघाटन सत्र रहा।

चर्चा मे भाग लेते हुए विजय कौशल जी ने शास्त्रीय दृष्टिकोण सें परिवार की एकता मे ही आनंद है। इसके कई उदाहरण प्रस्तुत किये। राज सिंह आर्य जी ने वेद मंत्रो का उदाहरण देते हुएए संयुक्त परिवार की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए इसे वैदिक व्यवस्था बताया।

मौलिक चिन्तक बजरंग मुनि जी ने चर्चा मे सार्थक हस्तक्षेप करते हुए परिवार और उसकी रचना पर व्यापक प्रकाश डाला। सब की कुछ विन्दुओ पर व्यापक सहमति थी। जैसे परिवार समाज व्यवस्था की प्रथम जीवंत इकाई है। परिवार स्वयं एक स्वतंत्र इकाई है, स्त्री पुरूष का संघ नही जैसा पश्विम की व्यवस्था मानती है। समाज मे स्त्री और पुरूष एक दूसरे के पूरक है, विकल्प नही। समाज मे स्त्री और पुरूष को पृथक वर्ग के रूप मे मान्यता देना या प्रोत्साहन घातक है। परिवार और समाज व्यवस्था के लिये विघटन कारी है। दुर्भाग्य यह है कि भारतीय संविधान मे परिवार या परिवार व्यवस्था के संबंध मे कुछ भी नही है। संवैधानिक व्यवस्था मे परिवार को भी मान्यता मिलनी चाहिये। परिवार के स्वरूप पर बजरंग मुनि जी ने कहा कि सामूहिक सम्पत्ति तथा सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर एक साथ रहने वाले व्यक्तियो के समूह को परिवार कहते है। मुनि जी ने संयुक्त परिवार के विघटन पर गंभीर चिन्ता व्यक्त करते हुए कई महत्वपूर्ण उपाय सुझाये। इस सत्र मे सहभागी प्रतिनिधियों ने अपना अपना परिचय भी दिया।

31 अगस्त को सम्मेलन के समक्ष लोक संसद पर चर्चा आरंभ हुई । मंच पर श्री बजरंग मुनि जी, श्री आचार्य पकज जी तथा ..... अग्रवाल जी उपस्थित रहे। उपस्थित प्रति निधियों ने इस सत्र मे व्यापक रूप से प्रश्नोत्तर किये मंचासिन महानुभावो ने समाधान देने का पूर्ण प्रयास किया। दोनो सत्रो की रिकार्डिग न्यूज चैनल ए टू जेड द्वारा किया गया। श्री रामवीर श्रेष्ठ जी सफलता पूर्वक एंकरिंग करते रहे। जब व्यवस्था परिवर्तन सत्ता परिवर्तन की परिभाषा गढ रहा हों जनान्दोलन निराश होकर थक गया हो । समाज किंकर्तब्य विमूढ की स्थिति मे लकवा ग्रस्त हो चला हो, राजनीतिक दल नग्न ताण्डव का खुला खेल, खेल रहे हो ऐसी विषम परिस्थिति मे लोक स्वराज्य के आग्रही लोग लोक संसद की परिवर्तन का भी परिणाम देने की दिशा मे अग्रसर हो, तो इसे शुभ घडी कहना अतिशयोक्ति नही होगी। राजनीतिक परिदृश्य पक्ष विपक्ष के रूप मे कृत्रिम ढंग से इतना शक्तिशाली और निरंकुश हो चला है कि श्री अन्ना हजारे जी के नेतृत्व मे विशाल आंदोलन हुआ, जिससे पूरे देश को एक आशा जगी थी , येन केन प्रकारेण तितर वितर कर दिया। ऐसी कठिन घडी मे दूर दृष्टि मापक श्री बजरंग मुनि जी ने लोक संसद की अवधारणा तथा उसके प्रारूप प्रस्ताव पर विचार विमर्श सम्मेलन मे करवा कर उसकी सर्व सम्मत स्वीकृति की आधार शिला रख दी।

1 लोक संसद का प्रारूप प्रस्ताव –वर्तमान लोक सभा के समकक्ष एक लोक संसद हो। लोक संसद की सदस्य संख्या चुनाव प्रणाली तथा समय सीमा वर्तमान लोक सभा के समान हो। चुनाव भी लोकसभा के साथ हो, किन्तु चुनाव दलीय आधार पर न होकर निर्दलीय आधाार पर हो।

2 लोक संसद के निम्न कार्य होंगे– लोकपाल समिति का चुनाव संसद द्वारा प्रस्तावित संविधान संशोधन पर निर्णय, सांसद सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश, मंत्री या राष्ट्रपति के वेतन भत्ते संबंधी प्रस्ताव पर विचार और निर्णय, लोक पाल समिति के भ्रष्टाचार के विरूद्ध शिकायत का निर्णय, व्यक्ति परिवार, गांव सभा, प्रदेश सरकार तथा केन्द्र सरकार के आपसी संबंधो पर विचार और निर्णय अन्य संवैधानिक इकाइयो के बीच किसी प्रकार के आपसी टकराव के न निपटने की स्थिति मे विचार और निर्णय।

3–लोक संसद का कोई वेतन भत्ता नही होगा बैठक के समय भत्ता प्राप्त होगा। लोक संसद का कोई कार्यालय या स्टाफ नही होगा लोकपाल समिति का कार्यालय तथा स्टाफ ही पर्याप्त होगा। यदि किसी प्रस्ताव पर लोक संसद तथा लोक सभा के बीच अंतिम रूप से टकराव होता है, तो उसका निर्णय जनमत संग्रह से होगा। संविधान के मूल तत्व समाजशास्त्र का विषय है और सामाजिक विचारको को निष्कर्ष निकालना चाहिये। संविधान की भाषा राजनीति शास्त्र का विषय है और राजनीतिज्ञ उसे भाषा दे सकते है। भारतीय संविधान के मूल तत्व भी राजनेताओ ने तय किये और भाषा भी उन्होने ही दी। संविधान के मूल तत्व तय करने मे समाज शास्त्रियो की कोई भूमिका नही रही या तो अधिवक्ता थे या आंदोलन से निकले राजनीतिज्ञ। संविधान निमार्ण मे गांधी तक को किनारे रखा गया जो राजनीति और समाजशास्त्र के समन्वय रूप थे। यही कारण था कि राजनेताओ ने संसद को प्रबंधक के स्थान पर अभिरक्षक (कस्टोडियन) का स्वरूप दिया। यही नही उन्होने तो ससंद के अभरक्षक स्वरूप की कोई समय अवधि तय न करके देश के साथ भारी षडयंत्र किया जिसका परिणाम हम आज भुगत रहे है । देश के समाज शास्त्रियो को मिलजुल कर संविधान के मूल तत्वो पर विचार मंथन करके कुछ निष्कर्ष निकालने चाहिए । हमारे संविधान निर्माताओं ने पक्षपात पूर्ण तरीके से राज्य को एक पक्षीय शक्तिशाली बना दिया । अब देश के समाज शास्त्रियो को मिलकर राज्य और समाज के अधिकारो की सीमाओ की पुनः व्याख्या का आंदोलन शुरू करना चाहिये। ।

लोक संसद यात्रा– व्यवस्था परिवर्तन मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री आचार्य पंकज जी, राष्ट्रीय संरक्षक प्रमोद वात्सल्य जी तथा लोक स्वराज्य मंच के राष्ट्रीय संगठन सचिव श्री रमेश चौबे जी के संयुक्त आग्रह को स्वीकार करते हुए उक्त संगठनों के प्रेरणा स्त्रोत श्री बजरंग मुनि जी ने दो मास की देश व्यापी यात्रा की स्वीकृति प्रदान करते हुए उसकी तैयारी के लिये बैठक को सूचित किया। बैठक मे यात्रा के नाम को लेकर काफी विचार विमर्श किया गया। अन्ततः यात्रा का नाम लोक संसद यात्रा सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ। उपस्थित

प्रतिनिधियो ने अपने–अपने जनपदो, प्रदेशों मे यात्रा का कार्यक्रम की स्वीकृति दी जिसकी संख्या बीस तक हुई अर्थात दस दिन की यात्रा 26 जनवरी 2014 ई से आरंभ करनी थी। दो महीने की यात्रा को कम से कम एक सौ बीस स्थानो की आवश्यकता थी । तब फलतः पदाधिकारियों ने निर्णय लिया कि पूरी तैयारी के साथ यह आगामी 15 अगस्त 2014 ई. से लोक संसद यात्रा रामानुजगंज से आरंभ करने की घोषणा प्रस्तावित हुई।

सम्मेलन मे प्रमुख रूप से सर्व श्री ओम प्रकाश दुबे नोएडा, अशोक त्रिपाठी वाराणसी, छबील सिंह सिसोदिया पिलखुआ, अमर सिंह आर्य जयपुर, प0 मौजी राम शर्मा नई दिल्ली, एच एम पाटिल धाडवाड कर्नाटक, जगजीत कुमार चोपडा नई दिल्ली, सुदर्शन कुमार कपूर गाजियाबाद, अर्पित अनाम हरियाणा, महावीर सिंह नोएडा, नरेन्द्र जी उत्तर प्रदेश, वैधराज आहुजा कांकेर छ0ग0, आचार्य धर्मेन्द्र आरा विहार, ललित कपूर, कमलेश त्रिपाठी सतना, धनश्याम गर्ग नोएडा, चन्द्रिका चौरसिया देवरिया, सुभाष जी करनाल, भीम सिंह करनाल, इशम सिंह हरियाणा, सतीश मुरैना, सुनील पाण्डेय मुम्बई, विजय शंकर शुक्ल देहरादून पुरन सिंह सीतापुर उ0प्र0, भानु प्रताप सिंह सीतापुर उ0प्र0, दीपक बलसूरकर उदगीर महाराष्ट्र, अरविन्द्र चतुर्वेदी कासगंज उत्तर प्रदेश, इस्लाम अहमद फारूकी सहावर उत्तर प्रदेश, उमेश खुर्मी बरनाला पंजाब, गंगा प्रसाद गुप्ता छत्तरपुर म0प्र0, नरेन्द्र सिंह कछवाहा राजसमंद राजस्थान, अभ्युदय द्विवेदी, रीवा म0प्र0, अखिलेश पाण्डेय भोरे गोपाल गंज विहार, मोती राम साहु धमतरी छ0ग0, स्वामी गंगा नंद यवतमाल महाराष्ट्र, श्यामलाल सोनी गरोठ मंदसौर म0प्र0, रामराज गुप्ता रामानुजगंज छत्तीसगढ, सुनील विश्वास रामानुजगंज छत्तीसगढ, राकेश शुक्ला दुर्ग छत्तीसगढ, रमेश सिंह राघव दयालपुर दिल्ली, संजय भाई नालंदा विहार महेन्द्र प्रसाद गेवा जोधपुर राजस्थान, ऋषिपाल सिह सम्मल उत्तर प्रंदेश, वैध सोम जी ऋषिकेश उत्तराखंड, प्रवीण शर्मा नोएडा उत्तर प्रदेश चिन्मय व्यास मालदेवता उत्तराखंड, प्रमोद वात्सल्य ऋषिकेश उत्तराखंड, अर्पित अनाम हरियाणा, चन्द्रपाल, पंजलासा हरियाणा, प्रीती पोरवाल भोपाल म0प्र0, अरविन्द्र चतुर्वेदी कासगंज उत्तर प्रदेश, रधुविर सिंह अंबाला हरियाणा, सुरेश ठाकुर बरेली उत्तर प्रेदश, गणेश रवि पलामु झारखंड, अजय भाई गाजियाबाद उत्तर प्रदेश, विपिन चौधरी गाजियाबाद उत्तर प्रदेश, श्वेता शर्मा विकासपुरी दिल्ली, चंन्द्र मोहन दुर्ग छत्तीसगढ विजय लक्ष्मी साव दुर्ग छत्तीसगढ, बंशीधर गुप्ता रामानुजगंज छत्तीसगढ अरविन्द कुमार चतुर्वेदी काशगंज उत्तर प्रदेश,नरेन्द्र चतुर्वेदी एटा उत्तर प्रदेश, बाल किशोर त्यागी मेरठ उत्तर प्रदेश, डा0ओम प्रकाश पालिवाल दिल्लो, राघवेन्द्र कुमार बलिया उत्तर प्रदेश, ललित मोहन गोपालगंज विहार, कुशलपाल सिंह शहादरा दिल्लो, सोम प्रताप गहलौत मेरठ उत्तर प्रदेश, राजेन्द्र कुम्भज जयपुर राजस्थान आदि पंद्रह प्रदेशो के करीब अस्सी लोग उपस्थित रहे।

प्रश्नोत्तर

1 विकास नारायण राय 27–9–13 जनसत्ता से

ग्वालियर की एक कार्यशाला में एक कार्यकर्ता ने चंबल क्षेत्र में राज्य सरकार के बेटी बचाओ अभियान से चिढे अभिवावक की प्रतिक्रिया बताई ''का हम आपन बेटी को मार न सकत '' । क्या हम अपनी पत्नी को भी नही पीट सकते यह हर भारतीय मर्द के अन्दर की आवाज होती है। हर बाप अपनी बेटी को संपत्ति से वंचित करता ही है।

हरियाणा में रोहतक के घर्णावती गॉव म परिजनो द्वारा अपनी बीस वर्ष की लडकी और उसी गॉव के तेईस वर्ष के प्रेमी की पाशविक हत्या में स्त्री विरूद्ध हिंसा के सामाजिक डी एन ए गहरे उतरी पूरी तस्वीर देखी जा सकती है। यहॉ तक इस संदर्भ में उन उपायों की भी परख की जा सकती है ,जो दैनिक हिंसा के ऐसे मामलों से मुक्ति दिला सकतें हैं। स्त्री को भी और समाज को भी ।

देश की राजधानी के ऐन पडोस मे हुए इस नृशंस कुकृत्य मे बहुत कुछ स्तब्धकारी है। पहली नजर मे अबूझ लगता है कि हत्यारे पिता, चाचा, भाई के व्यवहार या भंगिमा मे कोई मलाल नही नजर आता । उनके खाप–समाज मे भी बजाय किसी हताशा या पश्चाताप के एक अपराधिक षडयंत्रकारी चुप्पी भर है और वहॉ जीवन सामान्य ढर्रे पर चलता दिख रहा है। कमरे मे अनायास घुस आयी इस बीमारी को राजनीतिक हलकों द्वारा अनदेखा करने की परंपरा इस बार भी बखूबी चल रही है। ना कहीं मोमबत्ती जुलुस है ना हत्यारों को फॉसी देने की मॉग और ना ही कोई उत्तेजित प्रदर्शन। पुलिस अपराध की छानबीन मे सहयोग न मिलने का रोना रो रही है। अंत मे सबूत के अभाव मे हत्यारों को सजा भी नही मिलेगी। जैसा कि ऐसे मामलो मे होता आया है।

दरअसल बलात्कार जैसी यौन हिंसा पर जमीन आसमान एक करने वाले समाज और राज्य तंत्र के लिए घर्णावती जैसी लैंगिक हिंसा से मुॅह फेरना आम बात है। हत्यारों की मनोस्थिति मे, घर से प्रेमी के साथ चली गई बेटी को कपटी आश्वासन पर कि दोनो की शादी करा दी जाएगी , वापस गॉव बुलाकर मार देना सामान्य बात हुई। आखिर उनका अपनी बेटी से रोजाना का सबंध भी तो कपटपूर्ण ही रहता है। पहनावा, स्वास्थ्य, स्वच्छंन्दता, मित्रता, कैरियर, संम्पति विवाह आदि कामोवेश हर मामलें मे। ये हत्यारे अपने समाज के दिलेर हीरों भी ह कि उन्होने इस कपट को समय पडने पर अंतिम परिणति तक पहुंचाने की हिम्मत दिखाई है। समाज की इज्जत बचाई है।

एक टी वी चैनल पर हरियाणा के मुख्यमंत्री भूपेन्द्र सिंह हुडडा ने घर्णावती हत्याकॉड पर कहा कि कानून अपना काम करेगा। पर वह कानून है कहॉ जो अपना काम करे ? भारतीय दंड संहिता मे हत्या की सजा के लिए धारा 302 है जो लालच, वासना,ईर्ष्या, आवेश जैसी भावनाओं मे बह कर किए गए मानव वध के लिए होती है। परलैंगिक हत्याओं का संसार इनसे परे है। इसके लिए जरूरी डी एन ए एक अलग सामाजिक प्रकिया से तैयार होता है। इस डी एन ए की एक ही काट है स्त्री का लैंगिक सशक्तिकरण। ऐसा सशक्तिकरण कि वह अपने सिर पर लादा गया इज्जत का बोझ खुद उतारकर दूर फेंक सकें। तब जिनकी इज्जत जाती है वे आत्महत्या के लिए स्वतंत्र होंगें ना कि स्त्री की हत्या कर दनदनाते घुमने के लिए।

इन जडों को काटना जरूरी है। ऐसे कानून लाने की जरूरत है जो पुरूष और स्त्री के बीच लैंगिक असमानता पर निर्णायक प्रहार कर सके। उन कानूनी फैसलों को न्याय व्यवस्था के हर मंच के लिए स्थायी मार्ग दर्शक बनाना जरूरी है जो लैंगिक हिंसा की शिकार स्त्री के पक्ष मे सुनायें गयें हैं।

हरियाणा के ही भिवानी जिले की एक साहसी महिला सेशन जज ने इसी वर्ष दो ऐसे हत्यारों को गवाहों के मुकर जाने के बावजूद परिस्थति जन्य साक्ष्य के आधार पर फांसी की सजा दी, जिन्होने दिन दहाडे गांव मे अपनी दो रिश्तेदार महिलाओं को बदचलन घोषित कर सार्वजनिक रूप से लाठियो मे मार डाला था। इनमे से एक हत्यारा बलात्कार के अपराध मे कारावास की सजा काट रहा था और पेरोल पर गांव आया हुआ था। पितृसत्ता की नैतिकता से हमे इसी तरह निपटना होगा। दिल्ली बलात्कार कांड के उस सफाई वकील का उदाहरण

लीजिये जो सरे आम चिल्ला कर दावा कर रहा है कि उस कांड की पीडित लडकी के स्थान पर अगर उसकी बहन अपने पुरूष मित्र के साथ घूम रही होती तो वह बहन को जिंदा जला देता। वकील ही क्या। अगर इस वहशियाना कांड मे फांसी की सजा पाये चारो दोषियो के सामने यही प्रश्न रखा जाय तो वे भी पितृसत्ता के नैतिक पंच से वही दावा करेंगे जो वकील ने किया है। जमीनी सच्चाई यही है कि ऐसे कानून ही नही है जो लिंग स्टीरियोटाइप का दमन कर और स्त्री का हाथ पकड कर उसे सशक्तिकरण की राह पर ले जा सके । अचेत को सूचनाओ से लाभ नही पहुचता न अशक्त को कसरत रास आती है । उन्हे पहले अपने दिमाग से सोचने लायक और अपने पैरो पर खडे होने लायक होना जरूरी है। इसी दिशा मे ले जाने वाले कानून चाहिये। और ऐसी ही समझ भी कानून अगर महिला सशक्तिकरण का एक पहलू होगा तो समझ अनिवार्य रूप से दूसरा ।

महिला सशक्तिकरण कैसे हो ? कानून के स्तर पर और समझ के स्तर पर । कानून के स्तर पर एक नया लैगिंग दंड विधान बनाना होगा। इसके अंतर्गत स्त्री का हर अधिकार अहस्तांतरणीय होगा। या तो स्त्री उसका उपयोग करेगीं अन्यथा वह राज्य मे विलय हो जायगा। इस दंड विधान मे न्याय व्यवस्था के हर इंटर फेस पुलिस कांउसलिंग अदालत क्षतिपूर्ति पुनर्वास सभी के लिये पीडित क पास चल कर जाना जरूरी होगा। समयबद्ध रूप से । धरणावती जैसे मामलो मे जहां सारा समाज मूक षडयंत्र मे शामिल है और सारे सबूत नष्ट कर दिये गये है खुद को निर्दोष सिद्ध करने की जिम्मेदारी परिजनो की होगी। अभियोजन पक्ष के लिये केवल यह स्थापित करना काफी होगा कि लडकी की मृत्यु संदिग्ध परिस्थितियों मे हुई है।

हरियाणा पश्चिमी उत्तर प्रदेश राजस्थान मध्य प्रदेश पंजाब दूसरो से केवल इस तरह भिन्न है कि यहां ऐसे कुकृत्यों को संस्थागत रूप से सामाजिक स्वीकृति मिली हुई है जबकि अन्य जगहो पर यह व्यक्तिगत या कुनबागत है। समाज मे समझ का अभियान पिताओं की भी पितृसत्ता की विसंगतियों से उसी तरह रक्षा करेगा जिस तरह बेटी की। धरणावती जैंसे कांड हरियाणा के परिदृश्य मे इतने दुर्लभ नही है। कुछ वर्ष पहले रोहतक के ही एक अन्य गांव बहूजमालपुर की एक कमजोर बेटी ने परिवार द्वारा हिंसक प्रतिरोध की आशंका के चलते अपने प्रेमी के सहयोग से सात परिजनों की जहर देकर हत्या कर दी थी। यह भी पितृसत्ता की जय थी। पितृसत्ता के पूर्ण दमन की चुनौती कानून और समझ के लिये और टालना लोकतंत्र पर घातक चोट सरीखा होगा।

उत्तर–आपका पूरा लेख मैने पढा। ऐसे–ऐसे समाज तोडक,परिवार तोडक विचारो की बाढ आयी हुयी है जिन पर हम ध्यान नही देते किन्तु आप का लेख जनसत्ता जैसे प्रतिष्ठित समाचार पत्र में महत्वपूर्ण स्थान पर छपा है, इसलिए मैने आप को एक स्थापित विचारक समझकर उत्तर देना उचित समझा।

आपके लेख से जरा भी तटस्थता की कही गंध नही आ रही है। ऐसा लगा जैसे परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था को तोडने के उद्देश्य से पश्चिमी जगत के इशारे पर कोई एन जी ओ बनाकर यह लेख लिखा हो, अथवा वामपंथी साम्यवादी विचारको की श्रेणी में शामिल होने क कारण यह लेख लिखा गया हा। क्योकि पूरा लेख पढने के बाद सिर्फ एक ही बात सच दिखी वह भी आंशिक रूप से कि किसी भी व्यक्ति को किसी भी व्यक्ति की हत्या करने का अधिकार प्राप्त नही है भले ही वह उसके परिवार का सदस्य ही क्यो न हो क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को मौलिक अधिकार प्राप्त है तथा हत्या करना मौलिक अधिकार के उल्लंघन मे शामिल है। साथ ही सरकार या संविधान ने प्रत्येक व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी दी हुई है। यह गारंटी भी सिर्फ प्रत्येक नागरिक को प्राप्त नही है बल्कि प्रत्येक व्यक्ति को भी है। विदित हो कि नागरिक और व्यक्ति के बीच का फर्क भी समझने की आवश्यकता है। इस बात को मै आंशिक रूप से ही ठीक मान रहा हूँ। क्योकि मेरे विचार में अपने परिवार के किसी सदस्य की हत्या करना और दूसरे किसी परिवार के सदस्य की हत्या करने में बहुत अंतर है। निश्चित रूप से अपने परिवार के किसी सदस्य की किसी लोभ लालच में पडकर भी हत्या करना किसी अन्य परिवार के किसी सदस्य की किसी लोभ लालच मे पडकर हत्या करने की अपेक्षा कुछ छोटा अपराध है। यदि ऐसा अपराध सामाजिक रीति रिवाजों के नाम पर होता है तो वह तो और भी छोटा अपराध हो जाता है। मुझे आश्चर्य होता है कि आप नें बलात्कार के साथ जुडी हत्या की अपेक्षा ऑनर किलींग को ज्यादा गंभीर अपराध बताने का प्रयास किया है। जबकि समाज ऑनर किलिंग को बलात्कार हत्या से कम गंभीर अपराध मानता है। ऐसा लगता है कि आप परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को ना ही समझतें हैं ना ही मानतें है। आपके अनुसार तो व्यक्ति और सरकार ही सब कुछ है ना समाज है ना परिवार। यह सच है कि आनर किलिंग एक अपराध है और ऐसा करने वालो को हत्या के अपराध से दंडित भी किया जाना चाहिए। ऑनर किलिंग को रोका भी जाना चाहिए किंतु बलात्कार हत्या के प्रति समाज में जितनी धृणा का भाव होना चाहिए उतनी घृणा का भाव आनर किलिंग के मामले में नही हो सकता है और ना ही है।

आप ने पितृ सत्तात्मक परिवार व्यवस्था की आलोचना की है। मैं भी मानता हूँ कि इस व्यवस्था में सुधार होना चाहिए, मैने कई बार लिखा भी है और टी वी पर बोला भी है, कि परिवार के मुखिया का चुनाव परिवार के सारे लोग मिलकर गुप्त मतदान से करे। आप मेरी पुस्तक '' भावी भारत का संविधान '' जो तीस वर्ष पहले लिखी गयी थी, उसे पढें कि मैने यही बात लिखी है। मैं जानता हूँ कि ऐसी व्यवस्था होने के बाद भी 98 प्रतिशत परिवारो में पुरूष ही परिवार में मुखिया चुने जायेंगें। क्योकि विवाह के समय ही आमतौर पर पति अधिक योग्य तथा पत्नी ,पति से कम योग्य को जोडने की प्रथा है। जबतक आप इस प्रथा को नही बदलेंगें तबतक पितृ सत्तात्मक परिवार व्यवस्था को तोडना संभव नही है। आप को प्राकृतिक बनावट का भी ज्ञान होना चाहिए कि परिवार में पति को अक्रामक और पत्नी को अधिकाधिक आकर्षक होना चाहिए। इस प्राकृतिक संरचना को भी बदलने का कोई प्रयास करना होगा तभी इस व्यवस्था को पलटा जा सकता है तथा तभी इस प्रथा में आई बुराइयो को दूर किया जा सकता है किंतु इस व्यवस्था को पलटा नही जा सकता। यहॉ तक कि आप भी अपने पारिवारिक जीवन मे नही पलट सके होगें।

आपने प्रेम विवाह को अन्य विवाहो की तुलना में अधिक आकर्षक बताने का प्रयास किया है। मैं आनर किलिंग के तो विरूद्ध हूँ क्योकि किसी भी लडके या लडकी को स्वतंत्रता पूर्वक विवाह करने से बलपूर्वक रोकना अपराध माना जायेगा। किंतु मेरे विचार म प्रेम विवाह समाज की मजबूरी है। आदर्श स्थिति नही है, ऐसे विवाहो को निरूत्साहित करना चाहिए। मेरे विचार में आनर किलिंग के लगातार बढने के कारण आप जैसे लोग भी है, जो ऐसे प्रेम विवाह को प्रोत्साहित करते है। अधिवक्ता ए पी सिह ने जो बात कही वह आंशिक रूप से ही गलत है। उन्हे यह कहना चाहिए था, कि यदि मेरी लडकी ऐसा संबंध बनाती तो मै उसे अपने परिवार से अलग कर

देता। उन्हाने भावावेश में आकर ऐसी लडकी की हत्या की बात कह दी जो उन्हे नही कहनी थी। उनके इस भावावेश को आप जैसे परिवार विरोधी ,समाज विरोधी लोगो ने ऐसा मुद्दा बना दिया जैसे उन्होने कोई हत्या कर दी हो। परिवार एक संगठित इकाई है जिसमे रहते हुए सदस्यो का परिवार के अनुशासन का पालन करना होता है। परिवार की किसी लडकी को यह अधिकार है कि वह अपने किसी प्रेमी को अपना पति चुन लें। परिवार को यह अधिकार है कि बिना बल प्रयोग किए अपनी लडकी को ऐसे प्रेम विवाह से रोकने का प्रयास करे और न मानने पर उस लडकी से अपना संबंध विच्छेद कर लें। लडकी अपने किसी प्रेमी को विवाह के लिए चुन सकती है लेकिन लडकी का यह अधिकार नही है की वह मुझे या मेरी पत्नी को उस लडके का सास ससुर बनने का अधिकार दें दें। मेरे विचार में तो आनर किलिंग की घटनाओ के लिए हमे उन लोगो को भी दंडित करने का कानून बनाना चाहिए जो असंबद्ध होते हुए भी ऐसे प्रेम विवाह को प्रोत्साहन देते हो या सहायता करते हो ।

आप ने जिस तरह परिवार व्यवस्था का विरोध किया है वह सिर्फ विरोध तक सीमित है। आप ने कोई विकल्प नही दिया है, न ही कोई सुधार का मार्ग सुझाया है, आप को पता होना चाहिए कि कुछ बुराइयो के बाद भी समाज में परिवार व्यवस्था, हजारो वर्षो से चली आ रही है। इसमे से बुराइयो को निकालने की आवश्यकता है न कि उनकी बुराइयो का लाभ उठाकर इनके विरूद्ध वातावरण बनाने की। मुझे मालूम है कि आप जैसे लोगो ने इस परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था के विरूद्ध 70 वर्षो मे अनेक प्रयोग किए। साम्यवाद का प्रयोग तो पूरी तरह असफल घोषित हो चुका है पश्चिम का प्रयोग भी 70 वर्षो में ही अनेक विकृतियो को जन्म दे चुका है। आपके बनाये गये कानून 10–20 वर्षो में ही दम ताड देते है और उनकी जगह नये कानून बनाने पडते है। परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को इस बात का गर्व है कि हजारो वर्ष बीतने के बाद भी इस कानून में सुधार मात्र की आवश्यकता है इसे बदलने की नही।

आप ने महिला सशक्तिकरण पर बहुत जोर दिया है। आप किन महिलाओ को सशक्त करना चाहते है ? किससे सशक्त करना चाहते है? जो महिलाएँ परिवार का सदस्य होती है उनका तो स्वतंत्र अस्तित्व होता ही नही है।उन्हे तो मौलिक अधिकार ही व्यक्तिगत रूप से प्राप्त होता है। संवैधानिक तथा सामाजिक अधिकार व्यक्तिगत तो होते नही वे पूरे परिवार म संयुक्त होते है। यदि पश्चिम के परिवार तोडक, समाज तोडक एजेंट पंडित नेहरू तथा अंबेडकर ने दे भी दिए हो, तब भी 60 वर्ष बीतने के बाद भी अधिकांश परिवारो में ऐसे व्यक्तिवादी अधिकारो को स्वीकार नही किया। परिवार का अनुशासन परिवार पर सामूहिक रूप से रहेगा। उस सीमा तक रहेगा जिस सीमा तक उसके मौलिक अधिकार का हनन ना हो। बालिग हो जाने मात्र से किसी लडके या लडकी को परिवार का अनुशासन तोडने का लाइसेंस प्राप्त नही हो जाता। भले ही आप जैसे लोगों ने उन्हे ऐसा लाइसेंस क्यों न दें दिया हो । यदि परिवार का कोइ सदस्य बिना परिवार की अनुमति के मोबाइल का प्रयोग करता है तो उसे परिवार की अनुमति अवश्य लेना चाहिये और उसके बाद भी वो न माने तो परिवार को यह अधिकार है कि परिवार उस सदस्य को अपनी संपूर्ण संम्पति में से सदस्य संख्या के आधार पर उसका हिस्सा देकर उसे परिवार से अलग कर दे। इस विषय में यदि अब तक कोई कानून नही भी है तो अब ऐसा कानून बनाना चाहिए कि परिवार की संम्पूर्ण संम्पति में परिवार के प्रत्येक सदस्य का हिस्सा समान होना चाहिए। ऐसा कानून बनाना न्यायोचित भी है, तथा नेहरू अंबेडकर अथवा आप जैसे परिवार व्यवस्था के विरूद्ध षडयंत्र करने वालो के षडयंत्र को विफल करने का तरीका भी है।

पिछले 60 वर्षो में हमने कई तरह के सशक्तिकरण किए। आदिवासी सशक्तिकरण, हिन्दु सशक्तिकरण, हिन्दी सशक्तिकरण, गरीब सशक्तिकरण जैसे कई सशक्तिकरण हुए और इनसे कुछ लाभ भी हुआ तो कुछ हानि भी हुई। इन सबसे सामाजिक समरसता छिन्न–भिन्न हुयी। दूसरी ओर कमजोर तबको को न्याय भी मिला किन्तु इस प्रकार के सारे सशक्तिकरणो ने समाज व्यवस्था को तोडा। समाजिक समरसता की कीमत पर वर्ग सशक्तिकरण न्याय संगत हो सकता है किंतु समाधान नही है। समाधान तो ग्राम सभा सशक्तिकरण से संभव था जिसे छोडकर सारे के सारे सशक्तिकरण किए गए। फिर भी अन्य सारे सशक्तिकरणो ने समाज व्यवस्था को तोडा परिवार व्यवस्था को नही। ये महिला सशक्तिकरण एक ऐसा खतरनाक नारा है जो परिवार व्यवस्था को ही छिन्न भिन्न कर देगा। अन्य सभो सशक्तिकरणो में कुछ लाभ और कुछ हानि थी, क्योकि एक समूह सशक्त था और दूसरा समूह शोषित। यहॉ तो हर महिला किसी ना किसी परिवार की सदस्य है और महिलाओ का कोई समूह नही हो सकता जब तक कि वे परिवार की सदस्य है। ऐसी स्थिति में महिला सशक्तिकरण का नारा लाभ तो कुछ नही देगा उल्टा नुकसान ही नुकसान करेगा। अच्छा हो कि आप जैसे लोग इस प्रकार के कार्यो को छोडकर कुछ नये तरह का व्यापार हाथ में ले लें जिससे परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था को कोई नुकसान न हो।

2 अमर सिंह आर्य–जयपुर

प्रश्न– आपके विचार अच्छे हाते हुए भी ग्राह्य नही हो पा रहे। लोक संसद एवं स्वराज भाव वर्तमान राजनेताओं की मानसिक सोच के विपरीत बन चुके हैं। नकारात्मक सोच एवं अहम भाव के कारण कानून जनहित के विरूद्ध बन रहे हैं। यदि राजनीति मे सुधार उसे संयमित करने का कोई प्रयास हैं तो राजनेता उसे विफल करने मे जुट जाते हैं। जरूरत उस बात की है कि राजनीति मे सुधार के लिए लघु दीर्घ दोनो तरह के प्रयास होने चाहिए। समय की मॉग है कि चुनाव के पूर्व संविधान का अनुच्छेद 73 संसद को कानून बनाने का अधिकार देती है इसमे कोई दिशा, सीमा, मर्यादा इंगित नही करता। संसद जनता का प्रतिनिधि होने का दावा करती है, परंतु कानून बनाने के पूर्व लोगों की कभी राय नही ली जाती। व्यवहार मे देखने मे आया है कि, कानून बनाने मे अधिकॉश सांसदो की भागीदारी ना के बराबर होती है। नौकरशाही के स्तर से संम्बन्धित विभाग के सचिव द्वारा बिल मसौदा ड्राफ्ट होता है। मंत्री थोडी बहुत राय रखता है, सारे ड्राफ्ट अंग्रजी मे होते हैं। अनेकों कानूनो को लेकर तो कानून विदों जन–प्रतिनिधियों मे ही समझने मे भ्रम बना रहता है। आम व्यक्ति तो समझता ही नही है। कारणवश आम आदमी सर्वोच्च अथवा हाईकोर्ट मे अपनी समस्या को लेकर जाता है, वकील कोर्ट के बीच होने वाले प्रश्न उत्तर बहस को समझ ही नही पाता। इसलिए अधिकांश मामलों मे कानून के पालन कराने मे कोर्ट लगी रहती है। व्यक्ति को न्याय मिल ही नही पाता, कोर्ट मे ठगा महसूस करता नजर आता है। संसद कानून बनाने के अधिकार के कारण ही अपने को सर्वोच्च समझती है और लोकतंत्र की सहायक संवैधानिक संस्थाएं जैसे सुप्रीम कोर्ट, प्रशासन सी ए जी चुनाव आयोग के बारे मे विधायिका का व्यवहार ऐसा होता है कि ये सब उसकी अधीनस्थ की तरह काम करे। जैसे उच्चअधिकारी अपने सबआर्डीनेट अधिकारियों , कर्मचारियों से व्यवहार करता है वैसा ही रूतबा संसद का चले। जनता कोई प्रश्न ना उठाये, राजनेता अपने को जनता का मास्टर समझतें है इसलिए वे जनता को अपनी रियाया समझतें

हैं यही है हमारे 66 वर्ष के लोकतंत्र का परिणाम, जबकि संविधान कहता है––''We the people of India having solemnly resolved to constitute India into a(Sovereign, Socialist, Secular ,Democratic Republic) and to recure all its citizens.

संविधान मे स्पष्ट है कि सर्वोच्च भारत के लोग हैं ना कि लोकतंत्र मे सहायक उनके द्वारा बनाई गई संस्थाए। यह अनेको बार सिद्ध हो चुका है कि अनुच्छेद 73 का अनेक बार दुरूपयोग संसद द्वारा सांसदो के वेतन भत्तें सुविधाएं बढाने को किया। दूसरा सरकार के पास अध्यादेश के द्वारा कानून बनाने का अधिकार जो कोई लोकतॉत्रिक देशों मे यह अधिकार नही है। इस पर पुनः विचार होना चाहिए। अच्छा तो यही रहे कि सांसद एवं मंत्रियों के वेतन व अन्य सुविधाएं बढाने हेतु संसद के अतिरिक्त कोई दूसरी व्यवस्था बने। इस पर पहल करें। पूरा देश जानता है कि सुप्रीम कोर्ट व सूचना आयोग के कमशः दो निर्णय आये–पहले मे अपराधियों को चुनाव लडने स रोकने हेतु जनप्रतिनिधी कानून की धारा 8 (4) को असंवैधानिक घोषित करना, यह धारा दागियों को चुनाव लडने मे सहायक बनाती रही है। दूसरी सूचना आयोग द्वारा राष्ट्रीय दलों को सूचना के अधिकार के कानून के दायरें मे लाना इसमें चंदे से प्राप्त राशि को सार्वजनिक करना। उक्त निर्णय से राजनीति मे जैसे भूचाल आ गया और सारी पार्टियां एक जुट हो गयी । सुप्रीम कोर्ट मे अपराधियों को चुनाव से न रोके जाये रिव्यू पीटीशन दायर कर दी गयी। चुनाव आयोग को चन्दा का हिसाब न देना पडे सब छिपा छिपी बनी रहे, केवल 45 मिनट मे सूचना के अधिकार कानून को बदलने का निर्णय कर डाला। अब लोक तंन्त्र 66 वर्षो का प्रौढ हो चुका। उसे बच्चो जैसी हरकते शोभा नही देती। परन्तु हमारे जन प्रतिनिधि किसी संयम को अपनाने को तैयार नही । हर तरह उच्श्रृंखलता करते रहना अपना अधिकार मानते है। जन प्रतिनीधि स्वयं जन तंत्र के लिये खतरा बनते जा रहे हैं, इस बात को वे समझे। समाज मे उठ रहे बवंडर को समय रहते नियमित न किया गया जो प्रतिनीधियों के कार्य व्यवहार पर निर्भर करता है। वे अपने को लोकतांत्रिक पद्धति के अनुसार ढाले तो उनके हित मे ही रहेगा।

यह समझना कठिन नही कि यदि 545 लोक सभा सदसयों मे से 273 सांसद संसदीय शक्तियों का दुरूपयोग कर निजीहित साधते हैं, और न्यायपालिका उन्हे संयमित करने हेतु निगरानी रखती है तो यह संविधानेत्तर कार्य कैसे हुआ । इसलिये अनुच्छेद 73 मे संसद को संयमित रखने हेतु संशोधन इस प्रकार हो कि संसद पर समाज का नियंत्रण रहे ताकि वह अपनी मनमानी न कर सके।

उत्तर–आपने समस्याये तो बहुत बताई है किन्तु समाधान नही बताया। संविधान गलत है, सरकार गलत है, राजनेताओ की नीयत ठीक नही है, यह सब बाते तो हर आदमी से सुनने को मिल जाता है, किन्तु यह कोई नही बताता कि समाधान क्या है ? कैसे सफल होगा? तथा हम क्या कर सकते है? हमने अपनी बंदूक पहरेदारो को सौपकर दरवाजे पर अपनी सुरक्षा के लिए खडा कर दिया। वह पहरेदार हमारी हत्या करना चाहता है जिससे कि वह हमारे संपत्ति का मालिक बन जाए। उसकी नीयत खराब है यह सूचना देने वालो का अभाव नही है और न ही उनका अभाव है जो सलाह दे रहे है कि उस पहरेदार से बंदूक ले ली जाय। अभाव तो उन लोगो का है जो यह बता दे कि बंदूक वापस लेने के कौन–कौन से तरीकें है और उन तरीकों में से वर्तमान परिस्थितियो में कौन–कौन सा तरीका कारगर हो सकता है। आप ने भी अपने पत्र में कही नही लिखा कि किस प्रकार संसद के अधिकार कम किए जाए। आपने लिखा है कि संविधान की धारा 73 संसद को कानून बनाने का अधिकार देती है, यह अधिकार वापस होना चाहिए । मै यह नही समझा की धारा 73 को क्यो विलोपित किया जाय। जब संविधान संशोधन जैसे बिलों प्रकरणो में जनमत संग्रह का प्रावधान नही है तो हर कानून में जनमत संग्रह की मॉग करना कहॉ तक संभव है। आपने ही लिखा है कि संसद या राजनेता लोक संसद तक की छोटी सी मांग मा ाने को तैयार नही होगें तो धारा 73 में संशोधन की बात कैसे मान लेगें। आपने यह नही लिखा कि धारा 73 में बदलाव के लिए राजनेताओ को मनाने के लिए हमारे पास कौन–कौन से विकल्प है और उन विकल्पो में से कौन सा विकल्प लोक संसद से अधिक आसान है।

आपने लिखा है कि मै पूरा प्रयास करने के बाद भी सफल नही हो पा रहा हूॅ। आपको मालूम है कि मै एक विचारक हूॅ, ना ही कोई संगठन कर्ता, ना ही कोई सक्रिय कार्यकर्ता, मेरी सफलता–असफलता का मापदंड तो आप लोगों की सक्रियता पर निर्भर करता है। यदि मै किसी कार्य मे सफल नही हो पाया और यदि और लोग इस दिशा मे सफल दिख रहें हों अथवा सफल होने की कोई संभावना दिखती हो तो मैं उनके पीछे चलने को भी तैयार हूॅ। मै तो सिर्फ इतना ही चाहता हूॅ कि संसद के असीम अधिकारों मे कटौती हो और वह कटौती भो संसद के संविधान संशोधन संबंधी अधिकारो में भी यदि हो जाए तो मै आप के सभी प्रयत्नो को सफल मानूगां इतनी छोटी सी बात तो होना संभव नही दिख रही और बडी बातें करने से कोई लाभ नही होगा। दूसरे की समीक्षा करना आसान काम है अपनी समीक्षा करना आसान नही। आप ने पहले भी ऐसे ही शब्द मेरी असफलता की समीक्षा करके कुछ लिखा था, न मैने उसका बुरा माना था न आज का बुरा मान रहा हूॅ। फिर भी इतना जरूर है कि ऐसी समीक्षाओ मे ज्यादा समय खर्च करने की अपेक्षा कुछ ठोस विचार मंथन हो तथा सक्रियता की ओर बढा जाय तो ज्यादा अच्छा होगा।

3 नरेन्द्र सिंह जी बुलंदशहर

प्रश्न (1) ज्ञान तत्व अंक 276 के पृष्ठ 1 व 2 पर आपने मुजफ्फरनगर में हुए साम्प्रदायिक दंगों की समीक्षा की है। प्रस्तुत समीक्षा में आपने इस्लाम धर्म के संगठनात्मक गुणों एवं उनसे समाज पर पड़ने वाले प्रभाव की सूक्ष्म किन्तु संतुलित समीक्षा की है। यदि इस्लाम के संगठनवादी अन्यायों का यही व्यवहार समाज में रहा तो भला समाज में धर्म निरपेक्षता का अस्तित्व किस प्रकार जीवित रह सकेगा। कृपया अपना मत स्पष्ट करे?

उत्तर–यह सही है कि यदि इस्लाम के संगठनवादी अन्यायों का समाज मे ऐसा ही व्यवहार रहा तो समाज मे धर्म निरपेक्षता का अस्तित्व संकट मे पड जाएगा, किंतु यह प्रश्न तो संगठित मुसलमानों के साथ–साथ संघ परिवार तथा शिवसेना के समक्ष भी उठाने की आवश्यकता है। भारत में हिन्दू बहुमत मे है और हिन्दुओं मे भी धर्म निरपेक्ष शक्तियॉ बहुत है। क्यों नही संघ परिवार भी अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षा को छोडकर शांतिप्रिय हिन्दुओं का नेतृत्व स्वीकार कर ले? यदि ऐसा हुआ तो स्वाभाविक रूप से संगठनवादी मुसलमान अपना रूख बदलने को मजबूर हो जाएंगें। अभी–अभी आपने देखा होगा कि उत्तरप्रदेश सरकार ने सांम्प्रदायिक मुसलमानों को एक सीमा से कई गुणा अधिक सिर पर चढाया, लेकिन ज्यों–ज्यों उन्हें छूटें दी गई त्यों–त्यों उनकी इच्छाएं बढती चली गई और अंत मे हार थककर अखिलेश यादव की टीम को उन्हे झटका देना पडा। मैं जानता हूॅ कि मुज्जफरनगर की घटनाओं से भा.ज.पा. मजबूत हुई है और कहीं ना कहीं धर्म निरपेक्ष

ताकतों का कदम सही होने के बाद भी उन्हे नुकसान उठाना पडा है। सच भी है कि यदि दो संप्रदायिक शक्तियो में से किसी एक का सहारा लेकर आगे बढने का प्रयास किया जायेगा तो उससे लाभ तो हो सकता है किन्तु दीर्धकालीक इससे नुकसान ही होता है। देखे इससे भाजपा को लाभ होता है या हानि ।

प्रश्न (2) बलात्कार की घटनाओं को रोकने के लिए विवाह की न्यूनतम उम्र 12 वर्ष तय कर देनी चाहिए। पृष्ठ 3 पर दिया गया आपका यह सुझाव अजीब भी लगता है और मेरे विचार से उन बहुत सी दकियानूसी परम्पराओं को पुनर्जीवित कर देगा, पूर्व में जिनके उन्मूलन के लिए समाज ने गम्भीर संघर्ष किये है। माना कि स्त्री जाति को समाज के वर्ग के रूप में स्थापित नहीं किया जाना चाहिए। लेकिन क्या समाज को पूरक बनाने वाले समाज के इस अर्द्धभाग की स्वतंत्रता को कुछ गुंडो व समाज विरोधियों के भय से जमींदोज कर देना उचित रहेगा कृपया विषय को स्पष्ट करें?

उत्तर—सब कुछ पुराना सही है और नया गलत ऐसा मै कभी नही मानता किन्तु सब कुछ पुराना गलत है, और नया सही यह भी मै मानने के लिए तैयार नही हूॅ। देश काल परिस्थिति के अनुसार नये या पुराने के बीच संशोधन या परिवर्तन चलते रहते है। स्वतंत्रता पूर्व के काल में काम इच्छाये आमतौर पर 16 वर्ष के बाद ही जगा करती थी । इसलिए विवाह की उम्र 14—15 वर्ष आदर्श मानी जाती थी। किन्तु वर्तमान वातावरण में जब काम इच्छाये 16 वर्ष से बहुत पहले जगने लग गई तो स्वाभाविक था कि विवाह की उम्र कुछ घटायी जाती। मै तो ऐस संशोधन का पक्षधर हूॅ। किन्तु पता नही क्यो इस उम्र को घटाने की जगह बढाने का प्रयास किया गया। यह कहा जाता है कि प्राचीन समय में 12 वर्ष से पूर्व में भी विवाह हो जाते थे यह कहना सही होते हुए भी इसलिए गलत है क्योकि पुराने जमाने में विवाह के बाद भी विवाहित जोडे को एक साथ रहना तब तक वर्जित था, जबतक दोनो परिवार अपने दोनो बच्चो को इतना सक्षम नही मानते। इसे ही उस समय गौना कहते थे, जो प्रथा अब टूट गयी है। कोई प्रथा यदि पुरानी है इसलिए उसे छोड दिया जाय यह उचित नही है। छोडने का आधार यह नही हो सकता कि कुछ ना समझ अथवा स्वार्थी लोगो ने इसी प्रथा के विरूद्ध लम्बा संघर्ष किया हो। किसी मामले के गुण दोष की समीक्षा करके उसे स्वीकार या अस्वीकार किया जा सकता है। आपने महिलाओ को समाज का आधा भाग लिखा है यह पूरी तरह गलत है, क्योकि परिवार में सम्मिलित होने के बाद महिला या पुरूष का अलग से कोई स्वतंत्र अस्तित्व नही होता। तब तक नही होता जब तक वह उस परिवार के सदस्य है। महिलाओ को समाज का आधा भाग कहने की प्रथा तो पश्चिम से आई है, जहॉ परिवार एक स्वतंत्र इकाई न होकर कुछ लोगो की एक पार्टनरशिप है, जहॉ उनसे पैदा हुयी संतान परिवार की इकाई ना मानकर समाज की इकाई बन जाती है।

प0—(3) मैंने गतांक में आपके द्वारा छत्तीसगढ़ विकास यात्रा की स्पष्ट समीक्षा को ध्यान पूर्वक पढ़ा। आपने अपने स्वभाव के अनुसार तमाम स्थिति के विषय मे जैसा उचित समझा है वैसा कहने का प्रयास किया है। आपने रमन सिंह जी के राजनीतिक व शासकीय प्रबंधन की प्रशंसा की है,। मोदी जी की सूक्ष्म आलोचना करने का इस प्रकार प्रयास किया है कि मानो वह भारत के प्रधानमंत्री बन ही जायेंगे और अन्ततः आपने अपना मनमोहन प्रेम भी जाहिर किया है। लेकिन ज्ञान तत्व के गतांक में छपी यह समीक्षा और ज्ञान तत्व के पृष्ठ भाग पर अक्सर छपी रहने वाली उदघोषणा, भारत के तमाम व्यवस्था तंत्र के दोषों को जिस निर्भीकता से स्पष्ट करती है, इन दोनों प्रकार के विषयों पर स्पष्टता से लिखने वाले विचारक से मेरा यह प्रश्न करने का मन करता है कि स्वराज्य की अवधारणा का इतनी स्पष्टता एवं आतुरता से संदेश देने वाली पत्रिका ज्ञान तत्व, क्या किन्हीं राजनेताओं के चरित्र की समीक्षा का भी माध्यम बननी चाहिए। ये लोग लोक व्यवहार में चाह जैसे भी हैं लेकिन अंततः ज्ञान तत्व की उस मूल उदघोषणा के तो निश्चय ही विरोधी है, जो इसके पृष्ठ भाग पर अक्सर मुद्रित रहती है। कृपया विषय की पुर्नसमीक्षा करें।

उत्तर—मैने छ0 ग0 में रमण सिंह जी की विकास यात्रा की समीक्षा की है। मेरा अब भी मानना है कि जहॉ जहॉ भी भाजपा की मजबूत सरकारे बनी वहॉ वहॉ कांग्रेस की सरकारो की अपेक्षा चरित्र का विस्तार हुआ । मेरा अब भी मानना है कि संघ परिवार के कारण ही ऐसा होना संभव हुआ। मै यह मानता हूॅ कि भाजपा की सरकारो में चरित्र की अधिकता होते हुए भी स्वराज्य अथवा लोक स्वराज्य अथवा विकेंद्रियकरण के प्रति प्रतिबद्धता नही के बराबर है क्योकि संघ परिवार की मान्यता है कि वह चरित्र तथा सत्ता के केन्द्रियकरण का पक्षधर है ।

ज्ञानतत्व मे मेरे व्यक्तिगत विचार छपते रहें हैं। ज्ञानतत्व किसी संगठन अथवा संस्था की पत्रिका नही है। ज्ञानतत्व के पूर्वाद्ध मे कुछ भी लिखना मेरी स्वतंत्रता है और उत्तरार्ध संस्था की। इसलिए मैंने राजनेंताओं के चरित्र की भी समीक्षा की है। ज्ञानतत्व की जो मूल उद्घोषणा है वह भी मेरी व्यक्तिगत है मुझे अपने छत्तीसगढ के विकास यात्रा सबंधी लेख से उसमें कोई विरोधाभास नही दिखता। यदि आप इस संबंध में और अधिक लिखेगें तो मै विचार करूगॉ।

खबरे इस पखवाडे की

पिछले दिनो जनरल वी के सिंह का मामला प्रकाश में आया। जनरल वी के सिंह के पूरे कार्यकाल में उनकी ईमानदारी पर कोई प्रश्न नही उठा। वे बहुत ही संघर्षशील और व्यक्तित्व के धनी रहे किन्तु इनकी एक बहुत बडी कमजोरी रही कि इन्होने कभी अनुशासन का पालन नही किया।वह कमजोरी हमेशा ही उनके लिए तो संकट पैदा करती ही थी किंतु साथ ही उस इकाई को भी संकट में डालती थी जहॉ वे जुडे रहते थे। जनरल वी के सिंह की राजनीतिक महत्वाकांक्षा भी बहुत बढी चढी थी। उन्होने अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षा के कारण ही अन्ना हजारे से भी हाथ मिलाया और मौका पाते ही नरेंद्र मोदी के बगल में जा बैठे। उनकी इस महत्वाकांक्षा ने ही उनके पूर्व पद की गरिमा गिराई अन्यथा ऐसे ईमानदार तथा संघर्षशील व्यक्तित्व को तो निर्विवाद रूप से देश के सब लोगो का चहेता हो जाना चाहिए था।

वैसे तो जनरल वी के सिंह क कई कारनामे पता चले है जिनमे नवीनतम भेद यह खुला कि उन्होने अपने पद पर रहते हुए कश्मीर सरकार के किसी मंत्री को करोडो रूपये गुप्त रूप से दिए जिसे बाद में उन्होने आंशिक रूप से स्वीकार भी कर लिया। सरकार चुपचाप इसकी जाच भी करा रही थी कि कही यह रूपया कश्मीर की अब्दुला सरकार को अस्थिर करने के उद्देश्य से तो नही दिया गया था? जॉच चुप चाप चल रही थी जो किसी तरह किसी अखबार में छप गयी। जनरल वी के सिंह ने अखबार में छपते ही ना समझी भरी प्रेस वार्ता करके यह

कह दिया कि इस तरह धन देना कोई भ्रष्टाचार नही था।बल्कि पुराने समय से इस तरह धन देने की परम्परा रही है। निश्चित रूप से उनका ऐसा बयान देना अनावश्यक भी था और गैर जिम्मेदाराना भी क्योकि सरकार ने इस तरह की काई बात स्वीकार नही की थी और न ही अखबार ने उनपर भ्रष्टाचार का आरोप लगाया था। ऐसी गुप्त बाते इस प्रकार बोलना सरकार के लिए ही समस्या का कारण नही बनती है बल्कि देश की सुरक्षा के लिए भी संकट का कारण बनती है। यदि यह बात सच भी हो तो भी जनरल वी के सिंह को बहुत सोच समझकर बयान देना चाहिए था लेकिन उन्होने सोचना समझना तो दूर तत्काल ही जल्दीबाजी में नहले पर दहला मारने का कदम उठा लिया। जनरल वी के सिंह की ईमानदारी की अपेक्षा उनकी अनुशासन हीनता अधिक घातक है। अभी अन्ना और नरेंद्र मोदी को जनरल वी के सिंह को साथ लेने में अच्छा लग रहा है किंतु ऐसे लोग भविष्य में संकट में डालने वाले सिद्ध होते है।

इस पखवाडे एक दूसरी घटना ने मुझे आकर्षित किया। यों तो राजनीति का स्तर लगातार ही गिरता जा रहा है। राजनीति में नाटकबाजी भी बढ रही है तथा अपराधीकरण भी। यह वृद्धि का कम लगातार ही बढ रहा है, कितुं प्रधानमंत्री अथवा प्रधानमंत्री के दावेदार अपराधीकरण और नाटकबाजी से लगभग दूर रहतें आयें हैं किंतु पिछले दिनो भोपाल में भारतीय जनता पार्टी की एक रैली हुई, जिसमें प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेन्द्र मोदी का भाषण हुआ था। नरेन्द्र मोदी की रैली के दो दिन पूर्व ही कॉग्रेस के महासचिव दिग्विजय सिंह ने यह कहकर सनसनी फैला दी कि भोपाल में होने वाली रैली के आयोजकों ने एक दर्जी से दस हजार बुर्के खरीदे। जिनका उपयोग गैर मुस्लिम महिलाओं को रैली मे मुसलमान के रूप मे प्रमाणित करना था। आयोजको की ओर से सफाई भी दी गई कि यह बात असत्य है किंतु दिग्विजय सिंह ने उस दुकानदार को रशीद बुक भी प्रस्तुत कर दी और दुकानदार को भी घुमा–फिराकर ऑशिक रूप से यह बात स्वीकार करनी पडी। चुंकि यह बात भारतीय जनता पार्टी जैसे चरित्रवान पार्टी की ओर से नरेन्द्र मोदी जैसे दॉवपेंच करने वाले चालाक नेता के लिए कही गई इसलिए और भी ज्यादा विश्वास होता है कि नरेन्द्र मोदी ने ऐसा किया होगा, भले ही उन्होंने ना भी किया हो। मैं आपको यह भी बताता चलूॅ कि नरेन्द्र मोदी ने एक वर्ष पूर्व आजमगढ उत्तरप्रदेश की कुछ मुस्लिम छात्राओं के स्कूल की फोटो खिंचवाकर उसे गुजरात के नाम पर दिखाने जैसा काम किया था अैर खुलेआम उनका यह कृत्य पकडा भी गया था।

वैसे पूरे देश मे प्रधानमंत्री के रूप मे नरेंन्द्र मोदी की स्वीकार्यता भी बढ रही है और उनकी लहर भी दिख रही है यह बात सच है किंतु साथ ही साथ यह बात भी स्पष्ट होती जा रही है कि मोदी जी की विश्वसनीयता भी लगातार खतरें मे पडती जा रही है। अभी–अभी की घटना है कि अमेरिका मे पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज सरीफ और मनमोहन सिंह के एकसाथ होने के समाचार को मोदी जी ने इस तरह नवाज सरीफ द्वारा मनमोहन सिंह के विषय मे कहे गये कुछ शब्दों को तोड–मरोडकर उन शब्दों पर भाषण दिया तथा उन शब्दों पर बात का बतंगड बनाया गया और बाद मे जब जॉच हुई तो वह बात असत्य अथवा अर्धसत्य निकली। इससे मोदी जी भले ही अपने को प्रधानमंत्री की ओर कदम बढाने की सफलता मान रहें हो किंतु दुनिया भर मे उनके कथन की विश्वसनीयता घटती जा रहो है।

यह बात सत्य है कि वर्तमान समय मे नरेंन्द्र मोदी प्रधानमंत्री पद के लिए सफल होते दिख रहें हैं किंतु जिस प्रकार प्रधानमंत्री बनने के लिए मोदी जी युद्ध उन्माद फैला रहें हैं वह भी कोई अच्छी बात नही है। प्रधानमंत्री बनना उनका भी मिशन हो सकता है और संघ का भी मिशन हो सकता है, किंतु देश का मिशन नही है। युद्ध उन्माद अंततोगत्वा घातक परिणाम देता है, यह इतिहास मे कई बार सिद्ध हो चुका है।

एक तीसरे घटनाक्रम मे ऑतकवाद के आरोप मे जेंलो मे बंद संघ कार्यकर्ता भावेश पटेल ने यह बयान देकर सनसनी फैलाने का प्रयास किया कि दिग्विजय सिंह, गृहमंत्री सुशील शिंदे तथा कुछ अन्य कॉग्रेसियों ने उनकी गिरफ्तारी के पूर्व उन्हें बचाने के लिए इन्द्रेश कुमार और मोहन भागवत को षडयंत्र मे शामिल करने की शर्त रखी थी। ऐसी बातें विश्वसनीय नही है।, संघ चरित्र पर त्याग और ईमानदारी के विषय मे तो पूरा विश्वास है किंतु दॉवपेंच के मामलें मे संघ कार्यकर्ता की विश्वसनीयता ना कभी पहले थी, ना अब है। भावेश पटेल के उक्त आरोप मे कितनी सच्चाई है यह स्पष्ट नही हो सका , क्योंकि दिग्विजय सिंह यदि अविश्वशनीय है तो गृहमंत्री सुशील शिंदे के विषय मे ऐसा विश्वास नही होता। दूसरी ओर इन्द्रेश जी के विषय मे तो पहले भी कुछ सुनने मे आया था, परंतु मोहन भागवत के विषय मे ऐसी बातें सही प्रतीत नही होती। सच चाहे जो भी हो किंतु इस तरह की बातें समाज मे अविश्वास तो पैदा करतीं है। संघ जब तक सॉस्कतिक संगठन था तब तक संघ की विश्वसनीयता कुछ अलग प्रकार की थी और जब से संघ एक राजनैतिक दल बन गया है तब से उसकी विश्वसनीयता लगातार घट रही है।

एक दूसरे घटनाक्रम मे लालू प्रसाद का जेल जाना भी महत्वपूर्ण खबर बन गया है। मुझे याद है कि कुछ वर्ष पूर्व जब लालू प्रसाद रेलमंत्री हुआ करते थे, तब वे स्वयं को भारत का प्रधानमंत्री बनने का स्वप्न देखने लगे थे। लेकिन धीरे–धीरे उनकी इस इच्छा को नीतिश कुमार ने चूर–चूर किया और अब तो घटनाक्रम यहॉ तक बदल गया कि वे रेल से आगे बढते–बढते जेल से भी आगे पहुंच गए। ऐसा स्पष्ट दिख रहा था कि लालू प्रसाद को कुछ नही होगा, क्योंकि लालू प्रसाद की तिकडम की सफलता पर आम आदमी को पूरा विश्वास हो चला था। लालू प्रसाद ने दागी नेताओं के अध्यादेश को जारी कराकर ऐसा विश्वास भी करा दिया था कि लालू प्रसाद बच जाएंगे किंतु जो होना चाहिए था वह होकर ही रहा। लालू जी की सारी तिकडमें धरी की धरी रह गईं और लालू जी जेल में खादी का कुर्ता पहनकर सजायाप्ता कैदियों का नेतृत्व करते दिखेंगे।

लालू प्रसाद के साथ ही पूर्व मुख्यमंत्री जगन्नाथ मिश्र कुछ वर्तमान सांसद तथा अनेक आई ए एस (IAS) भी इस सजा के शिकार हुए हैं किंतु पूरे देशभर में ना जगन्नाथ मिश्र की चर्चा थी ना किसी अन्य सांसद की और ना ही आई ए एस (IAS) लोंगो की। साधारण से साधारण व्यक्ति भी लालू प्रसाद के जेल जाने की टिप्पणी कर रहा है क्योंकि लालू प्रसाद भारतीय राजनीति मे एक अलग तरह का स्थान रखते रहें है।

नवीनतम घटनाक्रम मे सर्वाधिक बहुचर्चित घटना दागी नेताओं सबंधी अध्यादेश की रही है। इस अध्यादेश ने कई बार करवट बदली,। सुप्रीमकोर्ट ने निर्णय देकर दागी नेंताओं को दो साल से अधिक दंड होते ही अपना राजनैतिक पद छोडने का फरमान सुना दिया। भा.ज.पा. ने तत्काल ही सुप्रीमकोर्ट के इस निर्णय का स्वागत किया। कॉग्रेंस पाटी ने सुप्रीमकोर्ट के इस निर्णय पर विचार करने के लिए एक बैठक बुलाई और बैठक होते तक भा.ज.पा. का भी मन बदल चुका था। भा.ज.पा. ने भी सहमति व्यक्त कर दी कि सुप्रीमकोर्ट के एसे निर्णय को प्रभावहीन करने के लिए संसद पहल करे। शीघ्र ही एक बिल का मसौदा बना और वह बिल राज्यसभा मे पारित भी हो गया, किंतु लोकसभा मे वह बिल नही लाया गया। संभव है तब तक कॉग्रेस पार्टी के कुछ लोंगो का मन बदल गया हो अथवा परिस्थितियां ही कुछ

बनी हो। कॉग्रेस पार्टी के कुछ लोग रशीद मसूद और लालू प्रसाद की संभावित सजा के पूर्व ही बिल पास कराना चाहते थे, और इसलिए उन्होने अध्यादेश लाने की योजना बनाई और वह योजना भी इतनी हडबडी मे बनी कि कहीं रशीद मसूद और लालू प्रसाद की तारीखें पार ना हो जाए। अध्यादेश सबंधी चर्चा में राहूल गॉधी ओर सोनिया गॉधी भी थे किंतु यह बात सच है कि अध्यादेश की घोषणा होने क बाद राहूल गॉधी के एक निकटस्त मित्र और सांसद श्री देवडा ने राष्ट्रपति के पास जाने के पूर्व ही अपनी असहमति व्यक्त कर दी थी। दूसरी ओर भा.ज.पा. के अंदर भी ठीक–ठाक नही चल रहा था। विशेषकर संघ परिवार इस प्रकार के अध्यादेश से प्रसन्न नही था, जबकि नरेन्द्र मोदी इस कारण चुप थे कि कहीं अमित शाह भी इस चपेट मे ना आ जाए। ज्यों ही अध्यादेश मंत्री मंडल से पास हुआ त्यों ही भा.ज.पा. ने खुलेआम अपनी असहमति व्यक्त कर दी। यहॉ तक कि भा.ज.पा. ने राष्टपति के पास जाकर भी अपनी असहमिति का स्वर बुलंद कर दिया। मुझे स्वयं ऐसा लगा कि

भा.ज.पा. ने इस सबंध मे आवाज उठाकर राजनीति की पहल अपने हाथ में ले ली। उधर राष्टपति भवन मे भी कुछ घटनाक्रम चल रहा था। एसा लगा जैसे राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी भी जन–भावनाओं से प्रभावित हो रहे थे। प्रधानमंत्री देश के बाहर थे, और इसलिए राष्ट्रपति जी ने कुछ वरिष्ठ मंत्रियों को बुलाकर प्रधानमंत्री के आने तक रूकने की सलाह दे दी। सच बात है कि उन दो दिनो के कालखण्ड मे मेरे मन मे भी भा.ज.पा. के प्रति बहुत अच्छे भाव प्रगट हुए, कि उसने मोदी जी के चुपी के बाद भी इतना बडा कदम उठाया। एकाएक घटनाक्रम मे करवट बदली। राहुल गॉधी ने बहुत ही कठोर शब्दों मे इस अध्यादेश को रददी की टोकरी मे डाल देने लायक बताया। जिस नाटकीय ढंग से जिन शब्दों का चयन करके राहूल गॉधी ने बयान दिया उस बयान मे पूरे देश के लोग अलग–अलग मंतव्य खोजने का प्रयास कर रहें हैं,। कुछ लोगों का मानना है कि राष्ट्रपति द्वारा रोकने के बाद किसी योजना के अंर्तगत राहूल गॉधी से यह बात कहलाई गई। कुछ लागों का मानना है कि राहूल गॉधी को स्थापित करने के लिए ऐसा नाटक कराया गया। कुछ लोगों का मानना है कि राहूल गॉधी और सोनिया गॉधी मे कुछ अनबन चल रही है। कुछ लोगों का मानना है कि मनमोहन सिंह को नीचा दिखाने के लिए यह सब हुआ। ऐसा क्यों हुआ ? और क्या सच है, यह मुझे नही मालूम। मेरा तो ऐसा मानना है कि अपने साथियों की बात सुनकर राहूल गॉधी का गुब्बारा भर गया था जो इतनी कर्णभेदी आवाज के साथ एकाएक फूट पडा।

भारत मे मै अकेला व्यक्ति रहा जिसने पिछले एक वर्ष से ज्ञानतत्व मे लिखा भी और ए टू जेड टी वी चैनल पर बोला भी कि राहूल गॉधी मे प्रधानमंत्री की योग्यता कम है, महात्मा गॉधी की योग्यता अधिक है। मेरा हमेशा से विचार रहा कि राहूल गॉधी मे कूटनीतिक समझबूझ का अभाव है। सत्य बोलने तथा अन्य चारित्रिक गुणो का आधिक्य है। मेरे विचार से वे स्वच्छ राजनीति के पक्षधर है जो किसी सीमा तक ही राजनीति मे संभव है। मेरी बात को टी वी पर अन्य प्रतिभागियों ने मजाक उडाया था, लेकिन मै अपनी बात पर दृढ था। आज मेरी बात सत्य होने के प्रथम चरण मे पहुंच गई है, जिसके अनुसार राहूल गॉधी ने अपनी सरकार के विरूद्ध ऐसा बयान देकर राजनीतिक सूझबूझ की कमी प्रदर्शित की है और सामाजिक सूझबूझ के प्रति अपना विश्वास प्रगट किया है। सच बात यह है कि दो दिन पूर्व जिस भा.ज.पा. के प्रति मेरे मन मे बहुत अच्छे भाव प्रगट हुए थे दो दिनो के अंदर ही उससे कई गुणा अच्छे भाव राहूल गॉधी के प्रति मेरे मन मे भर गए।

यदि मनमोहन सिह और नरेन्द्र मोदी की तुलना की जाए तो नरेन्द्र मोदी लगातार सफलता की ओर बढ रहें हैं, भले ही अपनी ईमानदारी के अतिरिक्त सारे दुर्गुण उनमें मौजूद हैं। दूसरी ओर मनमोहन सिह असफलता की ओर बढ रहें है , भले ही ईमानदारी सहित सारे सदगुण उनमें मौजूद हैं। यदि नरेन्द्र मोदी और राहूल गॉधी की तुलना की जाए तो दोनो की तुलना हो ही नही सकती। कहॉ नरेन्द्र मोदो जैसा राजनीति का पका पकाया खिलाडी और दूसरी ओर राहुल गॉधी जैसा अपरिपक्व अनाडी। एक ओर नरेन्द्र मोदी जैसा चालाक कूटनीतिज्ञ दूसरी ओर राहूल गॉधी सरीखा एक सीधा–सादा चरित्रवान बालक । यदि नरेन्द्र मोदी प्रधानमंत्री बनते हैं तो वे सफलता पूर्वक जीवन भर प्रधानमंत्री रह सकतें हैं क्योंकि किसी तानाशाह को किसी पद से आसानी से नही हटाया जा सकता, दूसरी ओर यदि राहूल गॉधो बन जातें हैं तो या तो एकवर्ष मे छोडकर भाग जाएंगें या हटा दिये जाएंगें। मेरे विचार मे राहूल गॉधी के हाथो देश की राजनीतिक बागडोर सौंपना उचित नही है, बल्कि राहूल गॉधी का राजनीति पर नियंत्रण होना ही सामाजिक हित मे है।

ऐसा लगता था कि भा.ज.पा. ने इस बिल का विरोध करके देश का मन जीत लिया है क्योंकि पूरा देश ऐसे किसी बिल या कानून के विरोध मे था किंतु राहुल गॉधी ने भा.ज.पा. के इस अवसर को छीन लिया है। अभी कम से कम भा.ज.पा. को राहूल गॉधी के इस घटनाक्रम मे कई तरह प्रश्न खडा करना उचित नही था। फिर भी देखिए कि चुनावों तक राजनीतिक घटनाक्रम किस प्रकार कितनी करवटें बदलता है।

उत्तरार्ध

नरेन्द्र सिंह बनबोई,बुलन्दशहर (उ0प्र0) 9012432074

आधुनिक परिवेश में मानव समाज

यथार्थ में अपने सामाजिक ढॉचे का आंकलन करते हैं तो पाते हैं कि हमारा राजनीतिक व धार्मिक नेतृत्व समाज को अपनी सत्ता स्थापना के लिए लगातार वर्ग संघर्ष के लिए गुमराह कर रहा है और इसे विडम्बना कहना ही ठीक रहेगा कि मानव सभ्यता के इतिहास में सहिष्णुता व निरपेक्षता को अपनी जीवन चर्या से स्फूर्त करने वाला भारतीय समाज आज उधार के दर्शन (PHILOSOPHY) का अनुकरण कर अपने अस्तित्व की सुरक्षा का संघर्ष कर रहा है। यह उधार का दर्शन क्या है? इस समय मैं धर्म निरपेक्षता के अस्तित्व पर प्रश्न कर रहा हूँ क्योंकि यह धर्म निरपेक्षता जिसे भाषाविदो ने सैक्यूलरिज्म के मायने के रूप में तब्दील किया है, उन्होंने धर्म व संगठन के गुणों में कोई अन्तर नहीं किया, या यूँ कहे कि दुनियां को सैक्यूलरिज्म (कथित धर्म निरपेक्षता) को जन्म देने वाले आधुनिक सभ्यता के मार्ग दर्शकों ने धर्म व संगठन के दर्शन को समझा ही नहीं था। दुनियां का कोई भी व्यक्ति इस विषय का अनुसंधान करें और यह सिद्ध करें कि कोई भी संगठन किसी अन्य से स्पर्धा के समय निरपेक्ष रह जायेगा। क्योंकि यदि उसने ऐसा किया तो निश्चित रूप से उसका अस्तित्व गौण हो जायेगा और कोई संगठन अपने अस्तित्व को भला कैसे गौण होने दे सकता है। दुनियां भर में धर्म निरपक्षता (सैक्यूलरिज्म) का दर्शन विभिन्न कथित धार्मिक (साम्प्रदायिक) संगठनों के संघर्ष के समय समाज के वर्गों का निरपेक्षता पूर्वक मार्ग दर्शन नहीं कर पाता और समाज, जगह–जगह पर साम्प्रदायिक संघर्षों का शिकार हो जाता है। मूलतः मैं यहॉ पर इस बात को स्पष्टता पूर्वक कह देना चाहता हूँ कि धर्म को

निरपेक्ष कहने का कोई अर्थ नहीं है। क्योंकि धर्म के पालन से निरपेक्षता स्वतः स्फूर्त होती है। हॉ, व्यक्ति मात्र को पंथ को निरपेक्ष बनाने के सतत् प्रयास करने चाहिए, यदि हम ऐसा कर पाये तो समाज से पंथ का अस्तित्व स्वतः ही समाप्त हा जायेगा और समाज धर्माचरण से ओत प्रोत हो जायेगा।

यद्यपि यह कार्य व्यक्ति मात्र के लिए दुर्लभत्म लक्ष्य की तरह है जिसे प्राप्त करना सरल कार्य नहीं है। लेकिन समाज के विभिन्न पंथों को, जिन्हें हम कथित तौर पर धर्म के रूप में स्वीकार करते हैं, उनके झंडा बरदारों का धर्म के दर्शन की मीमांसा करनी चाहिए और उस मीमांसा के परिणाम स्वरूप जो सार्वभौमिक सिद्धान्त प्राप्त हो उसे समाज को संयुक्त रूप से पालन करने का निर्देश देना चाहिए।

इस विषय को और भी विस्तार पूर्वक समझाने के लिए मैं भारतीय दर्शन के वैचारिक प्रभाव को स्वोकार करना श्रेष्ठकर समझूॅगा कि उसने धर्म का प्रत्यक्षीकरण किस प्रकार किया है।

यह हमें स्पष्ट शिक्षा देता है कि धर्म की कोई निश्चित आकृति नहीं होती, बल्कि यह तो देश काल परिस्थिति के अनुसार अपनी आकृति धारण करता है। धर्म न राज्य को निर्देशित करता है और न राज्य से अपने लिए निर्देश पाता है। यह समाज की अवधारणा के रूप में भी खुद को स्थापित नहीं करता। यह तो केवल व्यक्ति का व्यक्तिगत विषय है। इसका समाज की आकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। क्योंकि जो अवधारणा समाज को वर्ग में विभाजित कर देती है उसे पंथ अथवा सम्प्रदाय ही कहा जा सकता है। धर्म का इससे कोई सम्बन्ध नहीं होता। ..... मुझे नहीं पता कि दुनिया में इस धर्म निरपेक्षता (सैक्यूलरिज्म) नाम के शब्द की व्युत्पत्ति कब और किस प्रकार हुई। क्योंकि समाज के सार्वभौमिक अर्थ को समझते हुए जीवन मे मैने धम के जिस दर्शन को स्वीकार किया है उसमें किसी पंथ एवं जाति की अपेक्षा में न तो व्यक्ति का स्वतंत्र अस्तित्व गौण होता है और न समाज का। जरा समाज के मूल स्वरूप को समझते हुए, व्यक्ति मात्र समाज के संदर्भ में धर्म के दर्शन को प्रत्यक्ष तो करे। वह स्वयं से पूछे कि धर्म क्या है? क्योंकि जब तक दुनियां में सम्प्रदायवाद की अभिरक्षा के लिए धर्म को अनावश्यक रूप से निरपेक्ष कहने की गलती करी जाती रहेगी तब तक जन समसामान्य धर्म के गुण प्रधान स्वरूप को समझ ही नही पायेगा। धर्म कोई सम्प्रदाय या पंथ नही है जो कभी इसे निरपेक्ष कहने या बनाने की कोशिश करनी पड़े। यदि निरपेक्षता के संदर्भ में ही धर्म को देखा जाये तो यह समाज का इस प्रकार मार्गदर्शन करता है कि इससे निरपेक्षता की स्वतः ही व्युत्पत्ति हो जाती है और निरपेक्षता का यही भाव, समाज में किन्हीं भी घटनाओं वश उत्पन्न हुए पंथ, वर्ग और जातियों के निरपेक्ष स्वरूप को विकसित करने का मार्ग प्रशस्त करता है। लेकिन समाज पर सत्ता की स्थापना के लिए, कथित धर्म रक्षकों और राजनीतिकों ने धर्म के मूल स्वभाव को विषमृत करके, सम्प्रदाय व पंथ को धर्म के रूप में महिमामंडित करके समाज के मूल स्वरूप को ही नष्ट कर दिया। मैं आधुनिक समाज के विभिन्न घटको से यह प्रश्न करना चाहता हूॅ कि विभिन्न अवसरों पर अपनी–अपनी संगठनात्मक पहचान को अनावश्यक रूप से परिलक्षित करते हुए क्या किसी पक्षहीन समाज की रचना करी जा सकती है। सम्प्रदाय एवं पंथ के संदर्भ को ध्यान में रखते हुए हमें निरपेक्षता की परिभाषा पर जरा चिन्तन करना चाहिए। क्योंकि धर्म के गुण प्रधान स्वरूप से उत्पन्न होने वाली निरपेक्षता के भावार्थ को न समझने वाले पंथों के नायक ही समाज में गुजरात एवं मुजफ्फरनगर जैसी हिंसा के होने के अवसर उत्पन्न करते है। किसी पंथ का कोइ अवधारक जब अन्यों की अवधारणा, भावना परम्परा एवं सामाजिक ढॉचे के विरूद्ध जब कोई कार्य करता है तो पहले उसे यह विचार भी कर लेना चाहिए कि ऐसा करके, उसके सामने क्या परिणाम आने वाला है। प्रस्तुत विवेचना में दिये गये दोनों उदाहरण ऐसी ही क्रिया की प्रतिक्रिया का परिणाम है। मेरी नजर में ऐसा हो पाने का मूल कारण, समाज द्वारा धर्म की मूल परिभाषा को स्वीकार न करना है। क्योंकि हम समाज को यदि निरपेक्ष बनाना चाहते हैं तो हमें पंथ के महत्व को मृतप्राय करना होगा। अन्यथा पंथ, जाति और वर्ग के आधार पर सत्ता खोरी करने वाले लोग समाज के वर्गों को ऐसे रास्तों पर जाने के लिए गुमराह करते रहेंगे। क्या हमारा आधुनिक समाज ऐसे ही परिवेश में जीवन व्यतीत करता रहेगा। व्यक्ति मात्र को इस विषय पर अवश्य विचार करना चाहिए।